विपश्यना

साधकों का मासिक प्रेरणा पत्र

बुद्धवर्ष २५४८, आषाढ़ पूर्णिमा, २ जुलाई, २००४ वर्ष ३४ अंक १

धम्मवाणी

मलित्थिया दुच्चरितं, मच्छेरं ददतो मलं।
मला वे पापका धम्मा, अस्मिं लोके परम्हि च॥

ततो मला मलतरं, अविज्जा परमं मलं।
एतं मलं पहन्त्वान, निम्मला होथ भिक्खवो॥

धम्मपद-- २४२-२४३.

दुश्चरित्र होना स्त्री का मल है, कृपणता दाता का मल है और (सभी) पापपूर्ण (अकुशल) धर्म इहलोक और परलोक के मल हैं।

उससे भी बढ़ कर **अविद्या** (आठ प्रकार का अज्ञान) परम मल है। हे साधको! इन मलों को दूर करके निर्मल बन जाओ।

[धारण करे तो धर्म]

जो धारे सो पाय

(जी-टीवी पर क्रमशः चौवालीस कड़ियों में प्रसारित पूज्य गुरुदेव के प्रवचनों की अट्ठाईसवीं कड़ी)

धर्म धारण करना होता है। धारण करते हैं तो ही धर्म होता है, तो ही धर्म का फल प्राप्त होता है। नहीं तो कहता रहे – मंदिरों वाला धर्म, मस्जिदों वाला धर्म, गुरुद्वारों वाला धर्म, चैत्यों वाला धर्म; इन ग्रंथों वाला धर्म, उन ग्रंथों वाला धर्म कहता रहे। धर्म जीवन में नहीं उतरा तो धर्म कैसे हुआ? धारण करने पर ही धर्म होता है।

धर्म न मंदिर में मिले, धर्म न हाट बिकाय।
धर्म न ग्रंथों में मिले, जो धारे सो पाय॥

जो धारे, उसी को धर्म मिले। धारण करे नहीं, केवल चर्चा ही चर्चा करता रहे। जहां केवल चर्चा ही चर्चा होती है वहां फिर वाद-विवाद, तर्क –वितर्क ही होता है। कोई प्रवचन सुन लिया और विवाद करना है तो किसी एक शब्द को पकड़ लेंगे और उसी को लाठी बना करके मारना शुरू करेंगे –ऐसा क्यों कह दिया? इस शब्द का तो यह अर्थ होता है। हमारे यहां तो यह होता है। अरे बाबा, विवाद के लिए धर्म नहीं है रे! धारण करके तो देख। सारे विवाद दूर हो जाते हैं। धारण करने के लिए कोई आये। हो सकता है मन में पहले से कोई संशय लेकर आये, कोई शंका लेकर आये, कोई झिझक लेकर आये। फिर देखता है, अरे, क्या किया यहां? शील ही तो पालन किया ना और क्या किया? मन को एकाग्र किया, सो भी ऐसे आलंबन से जो सार्वजनीन है। सांस के आलंबन से एकाग्र किया। सांस तो सबका एक-सा है। और चित्त को निर्मल किया, सो भी शरीर में होने वाली संवेदनाओं के आलंबन से। वह तो सबकी एक जैसी है। तो सार्वजनीन बात है। कोई कठिनाई नहीं हुई और देख फल भी मिला ना!

कोई धर्म के नाम पर यह कहे कि जैसे मैं कहूं वैसे तू धर्म धारण कर, लेकिन तुझे फल मिलेगा मरने के बाद। अरे मरने के बाद जरूर मिलता होगा, हम उसको ना नहीं कहते। पर अब क्या मिलता है? आज भी तो मिलना चाहिए ना! धर्म धारण कर, आगे जाकर के तेरी भव से मुक्ति हो जायगी, संसार-चक्र से मुक्ति हो जायगी। अरे, हो जायगी तब हो जायगी; आज मुक्ति हो रही है कि नहीं? काहे का बंधन है? किससे मुक्ति चाहते हैं? विकारों का ही तो बंधन है ना! विकारों से ही तो मुक्ति चाहते हैं! विकार भी रहें और मुक्ति भी मिल जाय, तो कैसे होने वाली बात है?

"जे भाई चित्त न तजे विकारा, तो केहि विधि होवे भव पारा?"

मन में विकार भी रहें और मैं मुक्त भी हो जाऊं, भवपार भी हो जाऊं, जन्म-मरण के चक्कर से भी छूट जाऊं, तो भाई, कहीं कोई धोखा है। बचना चाहिए। धर्म धारण कर रहे हैं, विकार तो निकलते नहीं और आशा यह करते हैं कि मरने के बाद तो कुछ मिल जायगा, कोई अनोखी बात हो जायगी, हम मुक्त हो जायेंगे। तो भाई, इस धोखे से बचना चाहिए। अगर धर्म है और धारण करना शुरू किया तो यहीं उसका परिणाम आना चाहिए। भले थोड़ा-थोड़ा आये, पर आने तो लगा। भले मेरे विकार थोड़े-थोड़े निकले, पर निकलने तो लगे। मैं धर्म भी धारण करूं और विकार वैसे के वैसे; बल्कि उनका संवर्धन हो रहा है तो कहीं कुछ गड़बड़ है, कुछ गड़बड़ है। धारण करेंगे तो धर्म का रस चख ही लेंगे। चर्चा ही चर्चा करेंगे तो रस कैसे चखेंगे? रसगुल्ला बड़ा मीठा है, बड़ा मीठा है। होगा भाई, कोई कहता है तो मान लेते हैं। नहीं मानते तो वह समझाता है, अरे, इसमें शक्कर पड़ी है ना, इसलिए मीठा है। हां, समझ में आ गया। इसमें शक्कर पड़ी है इसलिए मीठा है। अरे, क्या काम आया। तेरी जबान पर रखे तब मालूम हो कि मीठा है। तो धर्म की चर्चा ही चर्चा करें, उस पर बुद्धि-विलास करें, वाणी-विलास करें और धारण नहीं करें तो भाई, धर्म का जो फल मिलना चाहिए, उससे वंचित रह जाते हैं। तो फल मिले।

सचमुच शील धारण करने का अभ्यास शुरू कर दिया। सचमुच मन को वश में करने का अभ्यास शुरू कर दिया। सचमुच मन को निर्मल करने का अभ्यास शुरू कर दिया। तो परिणाम यहीं आएगा। आने ही लगते हैं। यही सार्वजनीन धर्म है, सबका धर्म है। बस यह समझ में आ जाय कि सबका धर्म है तो धारण करने में कठिनाई न हो। तो धर्म को ले करके झगड़े न हों, फसाद न हो, मारपीट न हो। अरे, सबका धर्म है। चित्त को निर्मल करना ही तो धर्म है। विकारों से विमुक्त करना ही तो धर्म है। सबका धर्म है। किसी परंपरा के ग्रंथ को उठा कर देख लो, धर्म समाया हुआ है। विपश्यना समायी हुई है। काम करें नहीं और पाठ ही करें, तब क्या होगा? पाठ करें पर अर्थ ही नहीं समझें और अर्थ नहीं समझें तो उसको धारण कैसे करें? धारण करने पर ही धर्म कायम रहता है और कल्याण होता है। अनेक संप्रदायों के लोग शिविरों में आते हैं और हर शिविर के बाद कहते हैं अरे, अब

समझ में आयी। हमारी परंपरा का जो धर्म-ग्रंथ है ना, उसकी यह बात तो अब समझ में आयी। अरे बात तो वही की वही है। सारे ग्रंथों में धर्म की बात तो एक ही है। सार तो सब जगह एक ही है, पर धर्म को धारण किये बिना सार को कैसे समझे?

एक शिविर मस्जिद में लगा। कच्छप्रदेश में कोई एक बहुत बड़ी मस्जिद, उसके साथ बहुत बड़ी सराय जुड़ी हुई। तो दो शिविर लगातार लगे, एक के बाद एक। दूसरा शिविर समाप्त हुआ। उसमें अनेक लोग बैठे थे। उसमें दो मौलवी, बड़े आलिम-फाजिल, बड़े विद्वान। शिविर समापन पर आकर कहते हैं कि कुरानशरीफ की दो आयतें ऐसी हैं जो आज समझ में आयीं और बहुत अच्छी तरह समझ में आयीं। तो हमें बताते हैं कुरानशरीफ की दो आयतें –

मन अरब नफस हू, मन अरब नफस हू,
फकत अरब रब्ब हू, फकत अरब रब्ब हू॥

उसका अर्थ समझाते हैं –जो अपने सांस को देख लेता है, अपने शरीर को देख लेता है, अच्छी तरह देख लेता है, वह रब्ब को देख लेता है, परमात्मा को देख लेता है। पर कैसे देखे? सांस को देखे, कोई बात हुई? शरीर को देखे? लेकिन अब समझ में आया कि कुरानशरीफ क्या चाहती है। कैसे अपने शरीर को देखा जाय? अरे, नहाते हैं तो रोज ही देखते हैं। हमें तो रब्ब नहीं दिखायी दिया। और सांस को क्या देखें? इसका कोई रंग नहीं, कोई रूप नहीं, कोई आकृति नहीं। क्या देखें? अरे, देखने का मतलब अनुभव करना होता है। अब समझ में आया। तो भाई, चाहे जैसा ग्रंथ हो, धर्म की बात तो होगी ही। हम करें नहीं, हम धारण नहीं करें तो उस वाणी का क्या कसूर? वाणी तो अपनी जगह ठीक ही है। हम अर्थ भूल गये, काम करना भूल गये तो उसका परिणाम कैसे आये? सभी ग्रंथों में विपश्यना की चर्चा ही चर्चा, लेकिन विपश्यना का अभ्यास नहीं करे तो क्या काम आयी? हमें लाभ कैसे मिले?

सचमुच विपश्यना अपने शुद्ध रूप में पड़ोसी देश से आयी है कि नहीं? इसको जांचने का एक तरीका यह भी कि अभी परिणाम देती है कि नहीं? यह रिजल्ट ओरियेंटेड है कि नहीं? आशुफलदायिनी है कि नहीं? या यह भी ऐसा ही कोई आश्वासन देती है कि मरने के बाद यह हो जायगा, वह हो जायगा। अरे, हो जायगा, वह अपनी जगह है। अब क्या होता है? अब क्या परिणाम आते हैं? जो धारण करे, जब धारण करे, जहां धारण करे, वहीं परिणाम आये तो धर्म है अन्यथा हो सकता है कोई धोखा है।

धर्म होगा तो सार्वजनीन होगा, सबके लिए समान रूप से कल्याण करने वाला होगा। जो धारण करे –किसी संप्रदाय का हो, किसी जाति का हो, किसी वर्ण का हो, किसी गोत्र का हो, किसी रंग-रूप का हो। पुरुष हो, नारी हो, कोई फर्क नहीं पड़ता। जो धारण करे, उसको परिणाम अच्छे आएंगे ही। जहां धारण करे, परिणाम अच्छे आएंगे ही। जब धारण करें, परिणाम अच्छे आएंगे तो सार्वजनीन है, सार्वदेशिक है, सार्वकालिक है। तो यह विद्या भारत की बहुत पुरातन विद्या, बहुत पुरातन विद्या। अब भूल गये तो क्या किया जाय। फिर जागी है तो खूब समझ करके, अच्छी तरह आजमा करके स्वीकार करना चाहिए और जब आजमा लिया और देख लिया कि परिणाम अच्छे हैं। इससे तो राग निकलता है, द्वेष निकलता है, क्रोध निकलता है, वासना निकलती है, भय निकलता है, अहंकार निकलता है। मन की सारी कमजोरियां निकलती है। मन बड़ा बलवान होता है। ये सारे गुण हैं। फिर तो भाई, स्वीकार ही नहीं करना चाहिए, धारण करना चाहिए, अभ्यास करना चाहिए। अरे, वेद के नाम पर करो। कुरानशरीफ के नाम पर करो। गीता के नाम पर करो। बाइबिल के नाम पर करो। बुद्ध-वाणी के नाम पर करो। किसी नाम पर करो। अभ्यास करोगे तो फल मिलेगा ही। अभ्यास ही नहीं करोगे तो कैसे फल मिलेगा? कैसे लाभ होगा?

यह भी आवश्यक नहीं कि अपने आपको किसी एक संप्रदाय से दूसरे संप्रदाय में दीक्षित कर लो। यह ठीक है कि जैसे-जैसे धर्म में पकता जाता है, जिस महापुरुष ने यह खोयी हुई विद्या खोज निकाली, उसके प्रति कृतज्ञता का भाव तो जागता ही है। अरे वह नहीं खोज निकालता तो हमें कैसे प्राप्त होती? पुस्तकों तक ही रह जाती। फिर जिन लोगों ने इसे संभाल कर रखा, पड़ोसी देश के जिन लोगों ने गुरु-शिष्य परंपरा, गुरु-शिष्य परंपरा द्वारा इतनी सदियों तक शुद्ध रूप में संभाल कर रखा तब हमें प्राप्त हुई। नहीं तो कैसे प्राप्त होती? तो उनके प्रति भी कृतज्ञता का भाव जागना धर्म का एक आवश्यक अंग है। एक व्यक्ति धर्म में पक रहा है कि नहीं, इसका एक मापदंड है कि वह कृतज्ञ है कि नहीं। यह अलग बात है कि बुद्ध नहीं चाहता कि मेरे प्रति कृतज्ञ होवो, मेरा बड़ा उपकार मानो। करुणा से उसने इसे दे दिया। जिन्होंने संभाल कर रखा, वे भी नहीं कहते कि हमारे प्रति कृतज्ञ होवो। उन्होंने करुणा से संभाल कर रखा और बांट दी। भाई, अपना काम है, मन में कृतज्ञता का भाव आवे। पर यह अच्छी तरह जांच लें कि हमें किसी संप्रदाय में तो नहीं बांधा जा रहा। संप्रदाय में बांधने के लिए धर्म नहीं होता। धर्म सार्वजनीन होता है। सबके लिए एक जैसा उपकारी होता है। तो समझ करके धर्म धारण करना है।

पच्चीस सौ वर्ष पहले जबकि यह धर्म एक बार फिर जीवित हुआ था, यह खोयी हुई विद्या फिर जागी थी भारत में, तब इसने कैसे लोगों का कल्याण किया! कैसे लोगों का उपकार किया और जहां-जहां शुद्ध रूप में रही, वहां-वहां भले थोड़े से लोगों में ही रही, पर इसने कैसे उपकार किया और आज भी वही विद्या लोगों का कैसे उपकार कर रही है! उपकार कर रही है तो सही विद्या है, अन्यथा कोई धोखा है। तो पच्चीस सौ, छब्बीस सौ वर्ष के पूर्व का भारत, भगवान बुद्ध जब यह विद्या बांट रहे थे तब कितने लोग बदले, कितनों का जीवन बदला, कितनों के दुःख दूर हुए। एक बड़ा ज्वलंत उदाहरण अंगुलिमाल का। जिस व्यक्ति ने नौ सौ निन्यानवे व्यक्तियों की हत्या कर दी और एक हजारवें व्यक्ति की खोज में है। उसको एक हजार मनुष्यों की हत्या करनी है। यह व्रत पूरा करना है। कैसा पत्थर जैसा हृदय होगा उसका? कितना निर्दय, कितना कठोर! अरे, मनुष्यता ही खो बैठा। किसी भी प्राणी को मारे तो मन में द्वेष जगाना होता है, क्रोध जगाना होता है। मनुष्य को मारना तो बड़ा कठिन। कितना क्रोध, कितना द्वेष, कितनी दुर्भावना हो तब किसी मनुष्य की हत्या होती है। नौ सौ निन्यानवे मनुष्यों की हत्या की तो चित्त में कैसे संस्कार इकट्ठे किये! कैसे पत्थर की लकीर वाले कर्म-संस्कार इकट्ठे किये! वह व्यक्ति बुद्ध के संपर्क में आया। सही बात यह हुई कि बुद्ध उसके संपर्क में आये तब धर्म के संपर्क में आया। यही विद्या मिली। करते-करते, अपने मन के विकार निकालते-निकालते संत हो गया, अरहंत हो गया। वीतराग, वीतद्वेष हो गया तो करुणा से भर गया, मैत्री से भर गया, सद्भावना से भर गया। अब नगर-नगर, गांव-गांव फिरकर लोगों को यह विद्या बांटता है।

अरे, कितना गया-गुजरा मेरा जीवन कैसे बदल गया! मैं इतना दुखियारा व्यक्ति स्वयं भी दुखी रहूं, औरों को भी दुखी करूं। कैसे बदल गया मैं! अरे, तुम भी इस रास्ते चल के देखो! जितना-जितना चलोगे, यहीं इसका लाभ मिलेगा। तुम भी चल कर देखो। तुम भी चल कर देखो। लोगों को बांटता है। नहीं रहा जाता। जो धर्म का रस चख लेता है वह औरों को धर्म का रस चखने में प्रेरणा देने लगता है। नहीं रहा जाता। बांटता है लोगों को। कभी किसी ऐसे गांव में चला गया,

जहां किसी ने पहचान लिया, अरे, यह तो वही अंगुलिमाल है जिसने मेरे पिता की हत्या की। कहीं गया, किसी ने पहचान लिया, यह तो वही अंगुलिमाल है जिसने मेरे बेटे की हत्या की, मेरे पति की हत्या की, पत्नी की हत्या की, भाई की हत्या की...। लोगों को गुस्सा आता है तो मारते हैं उसे, डंडों से मारते हैं, पत्थरों से मारते हैं। शरीर से खून बहता है, खून की धाराएं बहती हैं फिर भी उसके हृदय में तो मैत्री ही बहती है, करुणा की धारा ही बहती है। अरे, तुम्हारा मंगल हो! तुम्हारा कल्याण हो! कभी मैं भी ऐसे ही भटका हुआ था। मैं भी लोगों को पीड़ा पहुँचाता था। यह विद्या मिली, मेरा कल्याण हो गया। तुम भी तो करके देखो, तुम भी तो करके देखो। अरे, विद्या, धर्म की विद्या आदमी को नेक आदमी बनाती है, नेक इंसान बनाती है। वह चाहे किसी संप्रदाय का हो, क्या फर्क पड़ता है? कोई हो, धारण करे तो निर्मल हृदय हो जायगा। सारे दुःखों से मुक्त हो जायगा।

एक कोई महिला, विवाह हुए कई वर्ष बीत गये। बेचारी को कोई संतान नहीं हुई। पुत्र की बड़ी लालसा। पुत्र हो, मुझे पुत्र प्राप्त हो और कुछ वर्षों के बाद उसे पुत्र प्राप्त हो गया। प्राप्त हो गया तो पुत्र के प्रति बड़ा प्यार। वह प्यार बड़ी आसक्ति में बदल गया। वर्ष, दो वर्ष में एक घटना घटी, उस बच्चे को सांप ने काट लिया और वह मर गया। अब मां के दुःख का ठिकाना नहीं। बच्चे की लाश अपनी छाती से चिपकाये हुए, मेरा बच्चा मरा नहीं रे, मेरा बच्चा मरा नहीं रे, यह सो गया है, इसे कोई जगा दे रे, इसे कोई जगा दे रे! लोग समझाएं, माई, यह मर गया। इसे अब कोई कैसे जगाएगा? नहीं जाग सकता। लाओ इसकी लाश हमारे हवाले करो, हम इसे दफना दें। नहीं, मेरा बच्चा मरा नहीं रे, मेरा बच्चा जिंदा है, कोई इसे जगा दे। यह सो गया है, कोई जगा दे। कोई ऐसा वैद्य मिल जाय। तो लोगों ने कहा, हां, एक वैद्य है, महावैद्य है। उसके विहार में जाओ। भगवान गौतम बुद्ध हैं। कौन जाने, वह तुम्हारा दुःख दूर कर दें। तो उस बच्चे की लाश को छाती से चिपकाये भागी-भागी गयी। भगवान के पास आकर चरणों में रखती है, मेरा बच्चा मरा नहीं महाराज, यह जिंदा है, सो गया है। आप कुछ कीजिए, मेरे बच्चे को जगाइये। वह मर भी गया है तो इसको जिंदा कीजिए, महाराज!

भगवान देखते हैं, यह इतने भावावेश में है कि धर्म की कोई बात समझने वाली नहीं। समझ सकेगी भी नहीं। तो कहते हैं, अच्छा बेटी, जा, नगर में जाकर के एक चुटकी सरसों के दाने ले आ। बड़ी खुश। भगवान कोई ऐसी दवा बनाएंगे जिससे मेरा बच्चा जी जायगा। तो चली। भगवान ने कहा, रुक, पूरी बात सुन के जा। उसी घर से लाना, जिस घर में कोई न मरा हो। हां, हां महाराज, ऐसे घर बहुत मिलेंगे जिनमें कोई नहीं मरा। वहीं से लाऊंगी। गई, घर-घर जाती है। अरे, मुझे कोई चुटकी भर सरसों दे दे रे! भगवान बुद्ध ने कहा है, तेरे बच्चे को जिला देंगे। अरे, चुटकी भर क्या, तू पूरा थैला ले जा, किसी तरह तेरा बच्चा जिये। तो पूछती है, तेरे घर में कोई मरा तो नहीं ना? तो मुँह लटक जाय बेचारे का। मरा कैसे नहीं, मेरा बाप मरा, मेरा अमुक मरा। जिस घर में जाय, मेरा अमुक मरा, मेरा अमुक मरा; कोई बाप मरा, कोई बेटा मरा, कोई भाई मरा। सारे नगर की प्रदक्षिणा कर ली। एक घर ऐसा नहीं मिला जिसमें कोई न मरा हो।

लौट आयी भगवान के पास। बात समझ में आ गयी। भगवान ने देखा, अब धर्म की बात समझने लायक हो गयी है। अरे, संसार में जो जन्मता है, मरने के लिए ही जन्मता है। पहले मरे कि पीछे मरे। बेटी, इसको जिला देने से तेरा दुःख दूर नहीं होगा। फिर और कोई दुःख खड़ा हो जायगा, और कोई दुःख खड़ा हो जायगा। इसलिए आओ, तुझे यह विद्या देता हूं। इससे सारे दुःख दूर हो जायेंगे। बच्चे की लाश औरों के हवाले की, भगवान के पास बैठ करके यही विद्या सीखी। यह विद्या सीखते-सीखते, चित्त निर्मल होते-होते संत हो गयी, अरहंत हो गयी। सारी बात समझ में आ गयी। अब तो करुणा ही करुणा; करुणा ही करुणा। अरे, ऐसी विद्या सबको मिले! इस संसार की महिलाएं कितनी दुखियारी! किसी को इस बात का दुःख, किसी को उस बात का दुःख। मैं कैसे इनको बांटूं! यह विद्या कैसे लोगों तक पहुँचे! कैसे लोगों का कल्याण हो! सारा जीवन लोक-सेवा ही लोक-सेवा। विपश्यना को बाटती हुई, विपश्यना का दान करती हुई, विपश्यना सिखाती हुई लोक-सेवा ही लोक-सेवा, लोक-सेवा ही लोक-सेवा।

एक और बेटी, उस समय के एक बड़े धनवान की बेटी, किशोर अवस्था से युवावस्था की ओर जाने लगी तो पांव फिसल गये। घर के ही किसी युवा नौकर के साथ घर छोड़ करके भाग गयी। जो माल-मत्ता आभूषण इत्यादि साथ ले जा सकी, सो ले गयी। बरस बीता, दो बरस बीते। घर की याद आये, माता-पिता की याद आये और वह एक आवेश था। आवेश दूर हुआ तो अब जी चाहे कि अपने माता-पिता के पास जाऊं और पति जाने न दे। इसी तरह से समय बीतता गया। उसे एक पुत्र हुआ, फिर एक पुत्र हुआ और ऐसा संयोग हुआ कि दोनों मर गये। ऐसा संयोग हुआ कि पति भी मर गया। फिर अपने पीहर आयी। श्रावस्ती नगरी में आयी तो सुना कि कल रात एक मकान गिर पड़ा। बहुत आलीशान मकान और घर का मालिक उसमें दब कर मर गया, मालकिन मर गयी और उनका इकलौता पुत्र मर गया। अरे, यही तो उसका पिता था, यही तो उसकी मां थी, यही तो उसका एकमात्र भाई था। सभी मर गये। अब जीवन में कोई नहीं जिसको मेरा कहे। बहुत व्याकुल, बहुत व्याकुल। पागल हो गयी।

श्रावस्ती की गलियों में पागल की तरह फिरे। पूरी नग्न होकर के फिरे। उसे कुछ होश नहीं। इतनी दुखियारी, इतनी दुखियारी। उसका कोई पुराना पुण्य था। भगवान के विहार के सामने से गुजरती है। भगवान वहां बैठे उपदेश दे रहे हैं। उनकी वाणी उसके कान में पड़ती है, बड़ी अच्छी लगती है। लोगों के साथ जा करके वह भी बैठ जाती है और धर्म की अमृत वाणी सुनते-सुनते-सुनते उसका पागलपन थोड़ी देर के लिए जरा-सा दूर होता है। उसे होश आता है तो देखती है, मैं नग्न हूं तो बेचारी सकुचाती है। पास कोई खड़ा था। उसने अपनी चादर ओढ़ा दी। तो लोग उसका नाम ही भूल गये। श्रावस्ती के नगर की कन्या, पर श्रावस्ती वाले उसका नाम ही भूल गये। क्योंकि तब से उसका नाम पटाचारा पड़ गया। किसी ने चादर ओढ़ायी, इसलिए नाम पड़ा – पटाचारा। भगवान पास बुलाते हैं, ऐ मेरी दुखियारी बेटी, पास आ! वह पास आती है और भगवान यही सिखाते हैं। यही विद्या सिखाते हैं। सारे दुःखों से बाहर निकल गयी। संत हो गयी, अरहंत हो गयी और शेष जीवन लोक-सेवा ही लोक-सेवा।

अगर किसी चमत्कार से उसके पुत्रों को जिला देते, उसके पति को जिला देते, उसके भाई को, उसकी माता को, उसके पिता को जिला देते तो दुःखों से बाहर कैसे होती? अरे, कितने जन्मों से न जाने कितने भाई, कितने पिता, कितनी माता, कितने पुत्र मरे हैं। उन सबकी हड्डियां इकट्ठी करें तो ढेर लग जाय, पहाड़ खड़ा हो जाय और उनको ले करके जितना रोये हैं, वह सारे आंसू इकट्ठे करें तो एक समुद्र खड़ा हो जाय। सारे दुःखों से बाहर निकलने की विद्या, इस जीवन में भी दुःखों से बाहर निकाले और आगे के लिए भी सारे दुःख समाप्त। पर धारण करे तब, कोरी बातों से नहीं होता। धारण करने में बड़ी मेहनत होती है। जो धारण करने में लग गया, उसका मंगल ही मंगल! उसका कल्याण ही कल्याण! उसकी स्वस्ति ही स्वस्ति! उसकी मुक्ति ही मुक्ति!

भवतु सब्ब मंगलं!

अमूल्य पुण्यावसर

पत्रिका का शुल्क देने में असमर्थ साधकों के सहायतार्थ हर महीने की पत्रिका में मंगल कामना स्वरूप (विज्ञापन के साथ) पू. गुरुजी के ६-६ हिंदी और राजस्थानी दोहे चौथे पृष्ठ पर नियमित रूप से छपते हैं। इस आय से सभी साधकों को एक वर्ष तक पत्रिका मुफ्त भेजी जाती है। यदि आप चाहें तो यह पुण्यावर आपकी फर्म को भी मिल सकता है। कृपया ध्यान दें कि इसमें केवल नाम-पता, ईमेल और फोन नंबर्स ही छपेगा, कोई व्यापारिक विवरण नहीं। अपना विवरण 'प्रकाशन विभाग', विपश्यना विशोधन विन्यास, धम्मगिरि, इगतपुरी-४२२४०३ को भेज सकते हैं। **विज्ञापन दर –रु. ३०००/-** प्रति विज्ञापन होगी। छपने के पश्चात पत्रिका की दो प्रतियों के साथ बिल भेजा जायगा।

'धम्मचक्क' विपश्यना केंद्र, सारनाथ

प्रसन्नता की बात है कि भगवान बुद्ध ने जिस भूमि पर अपना प्रथम धर्मोपदेश दिया था, उस पवित्र भूमि पर विपश्यना केंद्र का निर्माण तेजी के साथ चल रहा है। केंद्र तक पहुँचने की सड़क, सीमा-दीवार, कार्यालय आदि का निर्माणकार्य पूरा हो चुका है। धम्महॉल और पुरुष-महिला निवास का आवश्यक काम ४-६ महीने में पूरा हो जाने की संभावना है। तत्पश्चात केंद्र पर निवासी शिविर आरंभ हो जायेंगे। इस केंद्र के संवर्धन और रख-रखाव आदि के लिए असीम पुण्य-पारमी अर्जित करने के लिए यह सुअवसर है। सभी साधक इस पुण्यकार्य में भागीदार बन कर लाभान्वित हो सकते हैं। इसमें दिया गया दान ८०-जी के अंतर्गत आयकर-मुक्त होगा। इस धर्मकार्य में दान व धर्मसेवा देने के लिए यहां संपर्क करें – १) डॉ. पी. एन. सोमानी, ७४ जवाहर नगर कॉलोनी, वाराणसी-२२१०१०. फोन:०५४२-३१०७७५.

२) श्री सत्य प्रकाश, द रेमंड शॉप, कंबलघर एंटरप्राइजेज, सी-२७/२२७, बी-१, मलदहिया, वाराणसी-२२१००२. फोन: ०५४२-२२०५४१८, मो. ३११२३१४. फैक्स:२२०२२८५. e-mail: Kambalghar@sancharnet.in

'धम्मनाग' पर शून्यागारों का निर्माण

नागपुर भारत के मध्यवर्ती क्षेत्र का एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। यह अनेक महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों की कर्मभूमि रह चुका है। 'धम्मनाग' विपश्यना साधना केंद्र १९९७ में अस्तित्व में आया और तब से यहां १५० से अधिक शिविरों का संचालन हो चुका है। गंभीरतापूर्वक ध्यान के लिए एकाकी और सुविधापूर्ण स्थान आवश्यक होता है। दीर्घ शिविरों का आयोजन शून्यागारों के बिना संभव नहीं हो पाता। इसे ध्यान में रखते हुए यहां पर ४० शून्यागारों और ४० एकाकी निवास के निर्माण की योजना है। सभी साधक इस पुण्यकार्य में भागीदार बन कर लाभान्वित हो सकते हैं। इसमें दिया गया दान ८०-जी के अंतर्गत आयकर-मुक्त होगा। इस धर्मकार्य में दान देने के लिए यहां संपर्क करें –१) सचिव, कल्याणमित्र चैरिटेबल ट्रस्ट, अभ्यंकर स्मारक भवन, अभ्यंकर रोड, धन्तोली, नागपुर-४४००१२. फोन: **०७१२**-२५५८६८६, फैक्स: २५३९७१६. २) श्री गोवर्धनदास केला, फोन- नि. २५३२७९८. ३) श्री सुधीर शाह, मो. ३७९०७७१.

दोहे धर्म के

धारे तो ही धर्म है, वरना कोरी बात।
सूरज उगे प्रभात है, वरना काली रात॥

चर्चा ही चर्चा करे, धारण करे न कोय।
धर्म बिचारा क्या करे? धारे ही सुख होय॥

चर्चा ही चर्चा करे, केवल करे बखान।
चाख न देखा धर्म रस, कैसे हो कल्याण?

मानव जीवन रतन सा, किया व्यर्थ बरबाद।
चर्चा कर ली धर्म की, चाख न पाया स्वाद॥

बिन औषध सेवन किए, रोग मुक्त ना होय।
बिना धर्म धारण किये, शोक मुक्त ना होय॥

औषधि के गुण गान से, रोग दूर ना होय।
जो औषधि सेवन करे, वही निरोगा होय॥

केमिटो इंस्ट्रूमेंट्स (प्रा.) लिमिटेड
८, मोहता भवन, ई-मोजेस रोड, वरली, मुंबई-४०० ०१८
फोन: २४९३ ८८९३, फैक्स: २४९३ ६१६६
Email: arun@chemito.net
की मंगल कामनाओं सहित

दूहा धरम रा

धरम सार सुख मूळ है, धरम सांति सुख खाण।
बिना सार धारण कर्‌यां, कठै मुक्ति निरवाण?

पढ्‌यो सुण्यो अर मान लियो, पर धार्‌यो ना रंच।
अणधार्‌यां ना धरम है, है मिथ्या परपंच॥

इसो धरम रो नियम है, इसी धरम री रीत।
धार्‌यां ही निरमळ हुवै, पावन हुवै पुनीत॥

सुद्ध धरम धारण करै, मिटै दंभ अभिमान।
मिलै घणो संतोस सुख, धरम करै कल्याण॥

धरम नहीं धारण करै, करै बात ही बात।
दीप सिखा कद री बुझी, रही अँधेरी रात॥

गुण धारण कीन्या नहीं, रह्यो नवातो माथ।
धरम सार तो छूटग्यो, खोखो रहग्यो हाथ॥

टीन्स गर्ल्स वेस्टर्न आऊटफिट
६१५, सदाशीव पेठ, लक्ष्मी रोड, पूणे-४११०३०
फोन: ०२०-२४४५५५४४
की मंगल कामनाओं सहित

'विपश्यना विशोधन विन्यास' के लिए प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादक: राम प्रताप यादव, धम्मगिरि, इगतपुरी-४२२४०३, दूरभाष : (०२५५३) २४४०८६, २४४०७६.
मुद्रण स्थान : अक्षर चित्र प्रिंटिंग प्रेस, ६९- बी रोड, सातपुर, नाशिक-४२२००७. **बुद्धवर्ष २५४८, आषाढ़ पूर्णिमा, २ जुलाई, २००४**

वार्षिक शुल्क रु. ३०/-,विदेश में US $ 10, **आजीवन शुल्क** रु. ५००/-, " US $ 100. **'विपश्यना' रजि. नं. १९१५६**/७१. Regn. No. AR/NSK-46/2003-05

Licenced to post w**ithout Prepayment of postage** -- Licence number-- **AR/NSK-WP/3**
Posting day- Purnima of Every Month, Posted at **Igatpuri-422403,** Dist. Nashik (M.S.)

If not delivered please return to:-
विपश्यना विशोधन विन्यास
धम्मगिरि, इगतपुरी - ४२२४०३
जिला-नाशिक, महाराष्ट्र, भारत
दूरभाष : (०२५५३) २४४०७६
फैक्स : (०२५५३) २४४१७६
Website: www.vri.dhamma.org
e-mail: info@giri.dhamma.org